यी शीलहरू पालना गर्नाले मन शान्त हुनुको साथै अगाडि काम गर्न सरल हुन्छ। दोस्रो खुड्किलो-शिविरको पहिलेका साढे तीन दिन श्वासमा ध्यान केन्द्रित गर्ने अभ्यास गरिन्छ। यस साधना विधिलाई 'आनापान' भनिन्छ। शुद्ध जीवन जीउन र मनलाई नियन्त्रण गर्न यी दुई कुरा आवश्यक र लाभदायी छन्। परन्तु तेस्रो खुड्किलो नभए यो शिक्षा अधुरो नै रहन्छ। तेस्रो खुड्किलो हो-अन्तर मनको गहिराईमा दबेको विकार हटाई मनलाई निर्मल बनाउनु। यो तेस्रो सिंढी शिविरको पछिल्लो साढे छ दिन विपश्यनाको अभ्यासको रूपमा गरिन्छ। यस अन्तर्गत साधक आफूभित्र प्रज्ञा जगाएर सबै कायिक तथा चैतसिक स्कन्धको वेदन गर्न सक्छ। साधकलाई दिनमा अनेक पटक साधनासम्बन्धी निर्देशन दिइन्छ र प्रतिदिनको प्रगति श्री गोयन्काजीको वाणीमा टेपबाट साँझ प्रवचनको रूपमा बताइन्छ। पहिलो नौ दिन पूर्ण मौन पालना गर्नु पर्छ। दशौं दिन मौन खुल्छ त्यसपछि फेरि बहिर्मुखी हुन्छन्। शिविर एघारौं दिन बिहान ७ बजे समाप्त हुन्छ। शिविरको समापन मंगल मैत्रीको साथ गरिन्छ जसमा शिविरकालमा अर्जित पुण्यको भागीदार सबै प्राणीलाई बनाइन्छ।

शिविर

विभिन्न देशहरूमा विपश्यना शिविर स्थाई केन्द्रहरूमा लगाइन्छन्। सामान्य दश-दिवसीय शिविरहरूको आयोजना त भइरहन्छ; यसबाहेक साधनामा अघि बढेका साधकहरूका लागि समय-समयमा विशिष्ट शिविर र बीस, तीस तथा पैंतालीस दिनहरूको दीर्घ शिविर पनि लगाइन्छ। नेपाल र भारतमा बाल-बालिकाको लागि आनापानको लघु शिविर नियमित रूपमा सञ्चालन गरिन्छ जुन विपश्यनाको भूमिकाको काम गर्छ। यी शिविरहरू एक, दुई वा तीन दिवसीय हुन्छन् र यसमा ८ देखि ११ र १२ देखि १५ वर्षका बाल-बालिका सम्मिलित हुन सक्छन्।

विश्वभरमा नै शिविरको सञ्चालन स्वेच्छिक दानबाट हुन्छ। कसैसँग पनि शुल्क लिँदैन। शिविरको खर्च ती साधकहरूको दानबाट ब्यहोरीन्छ जो पहिले कुनै शिविरबाट लाभान्वित भएर पछि आउने साधकहरूलाई सहयोग गर्न चाहन्छन्। न आचार्य न त उनका सहायक आचार्यहरूले नै पारिश्रमिक लिने गर्दछन्। उहाँ तथा शिविरमा सेवा गर्ने पुराना साधक आफ्नो समय दिन स्वयं अगाडि आउँदछन्। यो परिपाटी त्यस शुद्ध परम्परासँग मेल खान्छ जसमा यस शिक्षा बिना कुनै वाणिज्यिक आधारबाट, मुक्त-हस्तले, कृतज्ञता तथा दानको भावनाले ओतप्रोत धनराशिको आधारमा वितरण गरिन्छ।

पड़ोसी देशों के साथ स्नेह-संबंध

सत्यनारायण गोयन्का

नेपाल विपश्यना केन्द्र
"धर्मश्रृंग" बुढानिलकण्ठ
काठमाडौं, नेपाल
फोन : ३७१६५५, ३७१००७
नगर कार्यालयः ज्योति भवन
कान्तिपथ, काठमाडौं
फोन : २५०५८१, २२६३२७

पड़ोसी देशों के साथ स्नेह-संबंध

सत्यनारायण गोयन्का

लुंबिनी (नेपाल) में दि. १९, २०, २१ नवंबर को होने वाली अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में सम्मिलित होने के लिए मुझे साग्रह आमंत्रण मिला। पड़ोसी बुद्धानुयायी देशों से संबंध सुधारने का मंतव्य मुझे बहुत प्रिय लगता है, क्योंकि इसे मैं स्वयं अपने जीवन का एक बहुत महत्त्वपूर्ण लक्ष्य मानता रहा हूं और इस निमित्त वर्षों से यथाशक्ति प्रयत्नशील भी रहा हूं।

परंतु यह उद्देश्य अत्यंत आदर्श होते हुए भी यदि साधनों में दोष हो तो वे संबंध सुधारने के स्थान पर बिगाड़ने का कारण बन सकते हैं। इसे ध्यान में रखना आवश्यक है।

वहां के लोगों में अपने-अपने देश और धर्म के प्रति गहरे तादात्म्य के साथ-साथ, प्यार, सम्मान और गौरव का भाव भरा है जो कि सहज स्वाभाविक है और हर दृष्टिकोण से उचित भी। इस स्वाभाविक स्वाभिमान के साथ-साथ उनकी संवेदनशीलता भी उतनी ही गहरी है। अतः उनसे व्यवहार करते हुए सदा सजग रहना चाहिए। हमारे किसी भी कार्य द्वारा जब उनके मन में यह संदेह जागता है कि हम उन्हें छोटा और अपने आप को बड़ा सिद्ध करके उन पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया चाहते हैं तो इसकी प्रतिक्रिया अत्यंत नकारात्मक और दौर्मनस्यतापूर्ण होती है जो कि स्वाभाविक है; चाहे यह प्रभुत्व प्रदर्शन राजनैतिक क्षेत्र में हो अथवा धार्मिक या सांस्कृतिक क्षेत्र में। क्षेत्रफल और जनसंख्या के कारण उनसे बहुत बड़ा देश होते हुए भी समझदारी इसी बात में है कि भारत अपना अहं त्याग कर अत्यंत स्नेहसिक्त भाव से उन्हें समानता का दर्जा दे। किसी क्षेत्र में भी उन्हें नीचा दिखा कर, उन पर अपनी महत्ता थोपने का जरा भी प्रयत्न नहीं करे। मैंने अब तक के अपने आधे से अधिक जीवन का समय अधिकांशतः म्यंमा (बर्मा) में और बहुत कुछ इन पड़ोसी देशों में बिताया है। अतः उनकी इस मानसिकता से खूब परिचित हूं।

हिंदू-बौद्ध एकता की वर्तमान कार्यशालाएं जिस पृष्ठभूमि के आधार पर आयोजित की जा रही हैं, उसे बदले बिना इन देशों से भारत के संबंध सुधरेंगे, इसकी आशा नहीं की जा सकती।

बुद्ध को विष्णु का अवतार बताना –

इसे लेकर कुछ ही वर्षों पूर्व इन पड़ोसी देशों में जो तीव्र नकारात्मक प्रतिक्रिया हुई, वह हमारे सामने है। कोई भी बुद्धानुयायी इस बात को भला कैसे सहन कर सकता है कि –

१) बुद्ध ऐसे विष्णु के अवतार हैं जो कि पृथ्वी पर बार-बार जन्म लेते हैं और बुद्ध के रूप में जन्म लेने के पश्चात पुनः कल्कि के रूप में ही नहीं, बल्कि जब-जब धर्म की हानि-ग्लानि होगी तब-तब उसके संस्थापन के लिए जन्म लेते ही रहेंगे। उन्हें कैसे सहन होगा कि यह सब उन गौतम सम्यक संबुद्ध के बारे में कहा जा रहा है जिन्होंने कि भव-संसरण से मुक्त होने के लिए अपने अनेक जन्मों में विपुल पुरुषार्थ द्वारा सभी धार्मिक पुण्यपारमिताओं को परिपूर्ण किया था। तदनंतर शाक्यराज शुद्धोदन के यहां बोधिसत्व सिद्धार्थ गौतम के रूप में जन्मे और युवा होने पर गृहत्याग कर परम सत्य की खोज में निकल पड़े। अत्यंत परिश्रम-पराक्रम द्वारा उन्होंने भारत की विलुप्त हुई पुरातन सनातन विपश्यना विद्या को खोज कर उसके प्रयोग द्वारा पुनर्जन्म प्रदान करने वाले अपने समस्त कर्म-संस्कारों और विकारों का पूर्णतया निष्कासन कर भवसंसरण से सर्वथा विमुक्त हुए। मुक्त अवस्था प्राप्त कर उन्होंने यह उल्लासभरी घोषणा की कि **"अयं अन्तिमा जाति"** – यह मेरा अंतिम जन्म है, **"नत्थिदानिपुनब्भवोति"** – अब मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा। ऐसी अवस्था में उनके पुनर्जन्म का कथन बुद्धानुयायी पड़ोसियों को कैसे स्वीकृत और सह्य होगा! अपनी इस परंपरागत दृढ़ मान्यता के रहते वे यहां की इस मान्यता को क्यों मानेंगे कि कोई बार-बार जन्म भी लेता है और भवमुक्त भी है।

किसी अच्छे से अच्छे उद्देश्य के लिए भी पुनर्जन्म लिया जाता हो तो भी पुनर्जन्म तो पुनर्जन्म ही है। पुनर्जन्म से नितांत छुटकारा पाए हुए बुद्ध को बार-बार जन्म लेने वाला विष्णु बताना बुद्ध-भक्तों के हृदय पर कितना असह्य प्रहार करता है, इसे समझना चाहिए। यदि हम कहें कि भविष्य में बुद्ध का पुनर्जन्म बार-बार होता ही

रहेगा तो बुद्ध की उपरोक्त घोषणा को मिथ्या साबित किया चाहते हैं। इसके साथ-साथ उनकी भवविमुक्तिप्रदायिनी शिक्षा को भी मिथ्या साबित किया चाहते हैं, जो कि करोड़ों लोगों को दी गयी और जिसके द्वारा हजारों की संख्या में भवमुक्त हुए साधक साधिकाओं के हर्ष-उद्गार हमारी अनमोल आध्यात्मिक धरोहर के रूप में पुरातन पालि साहित्य में आज भी उपलब्ध हैं।

२) इससे भी बुरा कथन जो किसी भी बुद्धभक्त के हृदय में बरछी लगने के समान पीड़ादायक होता है वह यह है कि बुद्ध विष्णु के सद्गुणों के नहीं, बल्कि उनमें समाए हुए दुर्गुणों के अवतार थे – वे मायामोह के अवतार थे। वे इसीलिए अवतरित हुए कि अपनी प्रवंचनाभरी वाक्चातुरी द्वारा आसुरीवृत्ति वाले लोगों को वैदिक कर्मकांडों से विमुख करके उनकी सद्गति का रास्ता बंद कर दें, यानी उनकी अधोगति निश्चित कर दें जिससे कि विष्णुभक्त इंद्र और उसके देवताओं का स्वर्गीय राज्य निष्कंटक और सुरक्षित रह सके। बुद्ध और उसकी शिक्षा को कलंकित करने के लिए इन कल्पनाजन्य मिथ्या मिथकों के आधार पर बुद्ध को विष्णु का नवां अवतार सिद्ध करना किसी बुद्धभक्त को कैसे स्वीकार्य और सहन हो सकता है भला! इसका प्रत्यक्ष प्रमाण कुछ वर्ष पूर्व थाईलैंड में हुई अत्यंत अप्रिय प्रतिक्रिया है। उनके रोष का इससे बढ़ कर और क्या प्रमाण होगा कि तदनंतर सोनी टेलीविजन द्वारा बुद्ध की जीवनचर्या पर दिखाये जाने वाले मिथ्यात्वभरे एपीसोड में मार द्वारा बुद्धमाता महामाया के साथ जो कुटिलताभरा वार्तालाप दिखाया गया उसने वहां के लोगों को गहरी चोट पहुँचायी। इसकी अत्यंत अप्रिय प्रतिक्रिया स्वरूप बर्मा के शीर्षस्थ सैनिक शासक ने स्वयं सोनी को इतनी कड़ी धमकी दी जिससे कि उसे इस एपीसोड को तुरंत बंद करने के लिए बाध्य होना पड़ा। इन सारी घटनाओं से हमें सबक सीखना चाहिए और बुद्ध को विष्णु का अवतार सिद्ध करने की हठधर्मी को सर्वथा त्याग देना चाहिए। इसी में समझदारी है। यदि बुद्ध को विष्णु का अवतार सिद्ध करने का पुनः प्रयास करेंगे तो जिन पड़ोसी बुद्धानुयायियों को पिछले दिनों गहरे घाव लगे हैं, उन्हें पुनः कुरेदने का ही काम होगा। इस मिथ्या प्रचार को पुनर्जीवित करके हम इन देशों से अपने संबंध सुधारने की आशा कैसे कर सकते हैं?

३) यही नहीं, लेकिन जब कोई बुद्धानुयायी यह सुनता है कि यही विष्णु आगे जाकर कल्कि के रूप में दसवीं बार अवतरित होगा और उस अवतार का एकमात्र

लक्ष्य यही होगा कि बौद्धों से युद्ध करे और भारत में ही नहीं, बल्कि अड़ोस-पड़ोस के देशों यानी चीन तक के सारे बौद्धों का सफाया कर दे। इसके लिए राम-रावण जैसा ही घोर युद्ध करके अवतारी कल्कि सारे बौद्धों का, उनके नेता का, जिसे जिन (बुद्ध) नाम दिया गया तथा शुद्धोदन और महामाया आदि सहित सबका वध करेगा और विजयी होगा। ऐसे बुद्ध और बौद्ध-विरोधी पौराणिक साहित्य के आधार पर अवतारवाद को उजागर करके क्या हम यह उम्मीद करते हैं कि इन पड़ोसी बुद्धानुयायी देशों से हमारे मैत्री संबंध सुधरेंगे?

अच्छा तो यही होता कि बुद्ध के विष्णु अवतार होने की मिथ्या वार्ता उठायी ही नहीं जाती। क्योंकि यह गड़े मुर्दे उखाड़ने का ही काम हुआ, जिससे उन पुरानी कब्रों में से हिंदुओं और बौद्धों के पुरातन ऐतिहासिक शत्रुता के जहरीले सांप-बिच्छुओं को पुनः अपना सिर उठाने का अवसर मिला। परंतु दुर्भाग्यवश यह गलत अध्याय खोल दिया गया। अब इसे किस समझदारी के साथ बंद किया जाय, यही अपने आप में एक बहुत बड़ी समस्या है।

मुझे यह जानकर बहुत आश्चर्य हुआ कि स्वयं डॉ. मोदी को भी नहीं मालूम था कि बुद्ध को विष्णु का अवतार बनाए जाने की उद्गम-कथा किस कपोल कल्पित कालिमा से दूषित है? इन कार्यशालाओं में ऐसे ही अन्य भी अनेक लोग होंगे। वे भी नासमझी से इस मिथ्यात्व का पृष्ठपोषण ही करेंगे और पड़ोसी देशों के साथ हमारे संबंधों में जहर ही घोलेंगे।

बुद्ध की शिक्षा का स्रोत वैदिक बताना –

ऐसी ही एक कार्यशाला की जो पुस्तक मुझे प्राप्त हुई, उसे मैं सरसरी निगाह से देख गया। इससे एक बात और उभर कर सामने आयी कि कार्यशाला के लगभग सभी भारतीय पंडित यह सिद्ध किया चाहते हैं कि बुद्ध की शिक्षा का वास्तविक स्रोत वैदिक परंपरा ही है। उनका आग्रह है कि बुद्धानुयायियों को इसे स्वीकार कर लेना चाहिए। जबकि पड़ोसी इसे कैसे स्वीकारेंगे? क्यों स्वीकारेंगे? वे बुद्ध की शिक्षा को एक नितांत स्वतंत्र श्रमण परंपरा के रूप में स्वीकारते हैं। ऐसी अवस्था में क्या यह आशा करना उचित है कि वे अपनी सारी मान्यताओं को तिलांजलि देकर इस मिथ्या कथन को स्वीकार कर लेंगे कि बुद्ध के पास अपनी ओर से लोगों को देने के लिए कुछ नहीं था।

उसने जो कुछ दिया वह वैदिक परंपरा से उधार लेकर ही दिया। जबकि तथ्य इसके सर्वथा विपरीत हैं।

वास्तविकता यह है कि बुद्ध ने एक अनुत्तर वैज्ञानिक की भांति सर्वथा नई खोज की। मनुष्य अपनी इंद्रियों द्वारा तत्संबंधित विषयों के संसर्ग में आने पर, उन्हें प्रिय या अप्रिय मान कर उनके प्रति राग या द्वेष जगाता है। **यह मान्यता उन दिनों भी प्रचलित थी और आज भी अनेक लोग यही समझते हैं।** परंतु बुद्ध ने उस समय की यह अनजानी सच्चाई खोजी कि **विषयों का इंद्रियों के संपर्क में आने पर शरीर में सुखद या दुखद संवेदना होती है। राग व द्वेष उस संवेदना के प्रति जागते हैं।** विश्व के इस महान वैज्ञानिक बुद्ध ने मानव जाति के कल्याण के लिए मन और शरीर के पारस्परिक संबंधों के विषय में यह एक बहुत बड़ी खोज की, जिसके आशुफलदायी परिणाम उन दिनों भी आए और आज भी आ रहे हैं। शारीरिक संवेदनाओं के माध्यम से मानसिक विकारों को जड़ों से निकालने की यह एक वैज्ञानिक विद्या प्रकाश में आयी। इस विद्या के बारे में वे स्वयं यही कहते थे कि मुझसे पहले जो बुद्ध हुए वे सभी इसी विद्या का प्रयोग करके भवविमुक्त हुए थे। यह पुरातन विद्या विश्व से लुप्त हो गयी थी। गौतम बुद्ध ने इसी की खोज की और भवविमुक्ति का पुरातन मार्ग पुनः उजागर किया। कोई भी बुद्धानुयायी जो इस विद्या के बारे में जरा भी जानकारी रखता है, वह इस बात को कैसे स्वीकार करेगा कि बुद्ध ने लोगों को अपनी ओर से कुछ नहीं दिया; जो दिया वह वैदिक परंपरा से ही लेकर दिया।

इस विद्या की उपलब्धि पर बुद्ध के मुँह से जो उद्गार निकले, और जिनका उन देशों में रोज पाठ किया जाता है, वे हैं–

पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि – पहले कभी सुना तक नहीं, ऐसे धर्म में मेरे अंतर्चक्षु खुले, ज्ञान जागा, प्रज्ञा जागी, (अविद्या दूर हुई) विद्या जागी, (अंधकार दूर हुआ) आलोक जागा। जो धर्म उन्होंने कभी सुना तक नहीं, उसे उन्होंने वेदों से प्राप्त किया, यह कोई कैसे मानेगा?

इस संबंध में ऐतिहासिक सच्चाई को भलीभांति समझने का एक और दृश्य हमारे सामने है। सम्यक संबोधि प्राप्त करके गोतम बुद्ध अपना प्रथम उपदेश देने के लिए बोधगया से ऋषिपत्तन मृगदाय (सारनाथ) की ओर प्रस्थान कर रहे हैं। राह में

आजीवक संप्रदाय का उपक नाम का एक संन्यासी उन्हें देखता है। बोधि के ओज से दीप्त, कांति और शांतिपूर्ण बुद्ध का चेहरा देख कर वह अत्यंत प्रभावित होता है और उनसे पूछता है,

"को वा ते सत्था? " – कौन है तुम्हारा गुरु?

"कस्स वा त्वं धम्मं रोचेसि? " – तुम्हें किसका धर्म रुचिकर लगता है?

इस पर बुद्ध उत्तर देते हैं,

"विमुत्तो सयं अभिञ्ञाय " – मैं स्वयं अभिज्ञान प्राप्त कर विमुक्त हुआ हूं।

"न मे आचरियो अत्थि " – मेरा कोई आचार्य नहीं है।

"एकोम्हि सम्मासम्बुद्धो " – मैं (इस समय) अकेला सम्यक संबुद्ध हूं।

संबुद्ध वही कहलाता है जो **सयम्भू** होता है। बिना किसी गुरु के स्वयं परम सत्य का मार्ग खोजता और उसे प्राप्त करता है। भवविमुक्ति का जो मार्ग एक सम्यक संबुद्ध खोजते हैं और लोकहित के लिए आख्यात करते हैं वह कालांतर में विलुप्त हो जाता है। जब कोई अन्य बोधिसत्व उसे पुनः खोज कर प्रकाशित करता है तब वह भी सम्यक संबुद्ध कहलाता है। पिछले सम्यक संबुद्ध काश्यप द्वारा खोजा गया विमुक्ति का मार्ग विलुप्त हो चुका था। उसे उनके पश्चात उत्पन्न होने वाले गौतम सम्यक संबुद्ध ने खोज निकाला और सर्वसुलभ बनाया। ऐसी अवस्था में श्रमण परंपरा के महापुरुष गौतम बुद्ध ने वैदिक परंपरा से ही ज्ञान प्राप्त किया यह कहना बुद्धानुयायियों को असह्य होना स्वाभाविक है।

ऐसी नितांत असत्य बात न कह कर यदि केवल यही कहा जाय कि इन दोनों स्वतंत्र पुरातन आध्यात्मिक परंपराओं ने समय-समय पर पारस्परिक आदान-प्रदान द्वारा एक दूसरे को प्रभावित किया है, तो यह बहुत कुछ सत्य भी होगा और सहज स्वीकार्य भी।

भारत एक महान देश है। बहुत पुरातन समय से इस देश में भिन्न-भिन्न मतमतांतर, भिन्न-भिन्न आध्यात्मिक परंपराएं जनमती और पनपती रही हैं। २६०० वर्ष पूर्व यहां अनेक परंपराएं जनमान्य थीं, जिनमें से दो प्रमुख थीं जो कि चिरकाल से चली आ रही थीं। एक थी श्रमण परंपरा और दूसरी वैदिक परंपरा। दोनों ही परंपराओं का अंतिम लक्ष्य भवसंसरण से मुक्त होना है। परंतु दोनों की कार्यप्रणाली बिल्कुल

भिन्न रही है। श्रमण परंपरा व्यक्ति को अपने ही श्रम द्वारा मुक्त हो सकने की मान्यता को प्रधानता देती है, जबकि वैदिक परंपरा किसी देव या ब्रह्म से याचना करके उससे मुक्ति प्राप्त करने की मान्यता को महत्त्व देती है। बुद्ध श्रमण संस्कृति के उन्नायक थे। घर छोड़ कर सत्य की खोज में बाहर निकलने पर अपने राज्य की सीमा के बाहर पहुँचते ही उन्होंने अपने सिर, दाढ़ी और मूंछ के केश-कर्तन का और श्रमण भेष धारण करने का पहला काम किया। उन दिनों के भारत में श्रमणों की यही पहचान थी। इसीलिए वे सदा श्रमण गौतम या महाश्रमण के नाम से संबोधित किये जाते रहे। उन दिनों कुछ अंशों में इन दोनों परंपराओं का परस्पर विरोध व वैमनस्य भी था। इसीलिए एक परंपरा वाले यदा-कदा दूसरे के लिए अपशब्दों का भी प्रयोग करते थे। ब्राह्मण श्रमणों को **"ये च खो ते, मुण्डका समणका इब्भा कण्हा बन्धुपादापच्चा"** – (ये जो मथमुंडे श्रमण हैं, जो इब्भ हैं यानी नीच हैं, काले हैं, ब्रह्मा के पैर से उपजे हैं) कह कर अपमानित करते थे। स्वयं बुद्ध भी इन्हीं अपशब्दों द्वारा अनेक बार अपमानित किये गये थे। इसी प्रकार श्रमण ब्राह्मणों को– **"अन्तोजटा बहिजटा"** तथा **"जटिल"** कह कर लांछित करते थे। बुद्ध श्रमण परंपरा के शास्ता होते हुए भी इस पारस्परिक विद्वेष को दूर करने के लिए आजीवन प्रयत्नशील रहे। **इसीलिए उन्होंने बाहरी दिखावे को महत्त्व न देकर श्रामण्य और ब्राह्मण्य की एक ही व्याख्या की और वह थी चित्त की नितांत निर्मलता। इस प्रकार उन्होंने यह सिद्ध किया कि दोनों का लक्ष्य एक ही है।** परंतु मार्ग तो भिन्न थे ही। श्रमण संस्कृति के उन्नायक बुद्ध ने श्रमण परंपरा के अनुकूल कभी मोक्षदाता होने का दावा नहीं किया, बल्कि स्पष्ट शब्दों में कहा कि केवल मैं ही नहीं बल्कि भूतकाल के जितने भी तथागत हुए हैं उन्होंने केवल मार्ग आख्यात किया है। अतः उनकी भांति वे भी केवल मार्गदाता हैं, मुक्तिदाता नहीं। मुक्ति के लिए प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं ही परिश्रम पुरुषार्थ करना होता है। तभी कहा – **"तुम्हेहि किच्चं आतप्पं अक्खातारो तथागता"** । कोई व्यक्ति किसी की कृपा से मुक्त नहीं हो सकता। किसी की कृपा केवल यही हो सकती है कि जो स्वयं मुक्ति के मार्ग पर चला है वह उसे आख्यात कर दे। जबकि वैदिक परंपरा में किसी से प्रार्थना करके उसकी कृपा द्वारा मुक्ति प्राप्त की जा सकने की दृढ़ मान्यता है।

हमें इन दोनों में से किसी एक को अच्छा और दूसरी को बुरा कहने की आवश्यकता नहीं है। परंतु दोनों के स्वतंत्र अस्तित्व को तो स्वीकारना ही होगा। दोनों की अपनी-अपनी स्वतंत्र परंपरा को नकारने से उनकी ऐतिहासिक सच्चाई भुलाई नहीं जा सकतीं। पड़ोसी देशों के साथ संबंध सुधारने के लिए कोई उनकी श्रमण परंपरागत मान्यता को अधिक महत्त्व न दे तो भी उतना महत्व तो देना ही

चाहिए जितना कि वैदिक परंपरा को दिया जाता है। यह आशा करना बिल्कुल गलत है कि श्रमण परंपरा के वे अनुयायी वेदों की परंपरा को स्वीकार कर उससे आ जुड़ेंगे। दोनों परंपराएं प्राचीन भारत की महत्त्वपूर्ण धरोहर हैं। दोनों को समान महत्त्व देने पर कहीं किसी विग्रह विरोध का अवसर नहीं आयेगा।

इसके विपरीत यह कहना कि बुद्ध की शिक्षा वैदिक परंपरा की उपज है, विग्रह विरोध का ही कारण बनेगी। मैं समझता हूं कि यदि सचमुच बुद्धानुयायी देशों को मित्रता के स्नेहसूत्र में बांधना है तो उनकी मान्यता को नीची साबित करके उन्हें अपनी ओर खींचने की आशा व्यर्थ है। इसीलिए मैं समझता हूं कि अच्छे परिणाम पाने के लिए इन कार्यशालाओं का मूल आधार बदलना होगा।

अच्छा यही होगा कि भारत अपनी वैदिक और श्रमण दोनों परंपराओं को समान महत्त्व देकर पड़ोसियों से गले मिलने का सद्प्रयास करे। यही कल्याणकारी साबित होगा। किसी को अपने से हीन सिद्ध करके उसे अपना मित्र बनाना चाहें, यह नीति कदापि व्यावहारिक नहीं है।

आज इन कार्यशालाओं में सम्मिलित होने वाला पड़ोसी देश का कोई प्रतिनिधि महज शिष्टाचार के नाते अथवा पूरी बात न समझ पाने के कारण ऐसी विचारधारा का विरोध न भी करे, परंतु भविष्य में जब उसे वास्तविक वस्तुस्थिति ज्ञात होगी तो उसे लगेगा कि वह ठगा गया। तब वही व्यक्ति भारत का घोर विरोधी हो जायगा। जो इन कार्यशालाओं में नहीं सम्मिलित हो रहे वे भी ऐसी बातें सुन कर विरोधी ही बनेंगे। अतः इन कार्यशालाओं के दूरगामी परिणाम अच्छे नहीं होंगे, ऐसा मुझे स्पष्ट दीखता है। जब तक इन कार्यशालाओं के लिए सच्चाई का आधार नहीं बनाया जाता तब तक परिणाम विपरीत ही आते रहेंगे।

भारतीय बौद्धों को साथ लेना आवश्यक है –

भारत में इतनी बड़ी संख्या में जो लोग अपने आप को बौद्ध कहने लगे हैं, यदि उनके साथ हिंदुओं के बिगड़ते हुए संबंध नहीं सुधरेंगे तो आशा नहीं की जा सकती कि पड़ोसी देश ऐसी स्थिति में इन कार्यशालाओं की नेकनीयती को स्वीकार करेंगे। प्रश्न केवल पड़ोसी देशों को संतुष्ट प्रसन्न करने का ही नहीं है, बल्कि अपने देश की एकता और बचीखुची अखंडता को कायम रखने का भी है। आज की यह अवस्था

ऊंच-नीच की घोर अमानवीय सामाजिक स्थिति के विरुद्ध किए गए स्वाभाविक विद्रोह का ही परिणाम है। समाज के एक अंग को अछूत करार दे कर उन पर सदियों से जो अमानुसिक अत्याचार हुए हैं, उन्हें नकारा नहीं जा सकता। जन्म को लेकर वर्णों की स्थापना और उसी से भिन्न-भिन्न ऊंची-नीची मानी जाने वाली अनेकानेक जातियों की उपज राष्ट्र की अखंडता के लिए स्पष्टतया घातक सिद्ध हुई है और भविष्य में और भी अधिक घातक ही सिद्ध होगी। इसे कोई भी समझदार व्यक्ति नजरअंदाज नहीं कर सकता। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि कांची के श्रद्धेय शंकराचार्यजी इस दिशा मे गंभीर चिंतन करते हैं और खूब समझते हैं कि ऊंच-नीच का यह जातिजन्य भेद मिटना ही चाहिए। यदि ऐसा है तो यह कार्यशाला इस दिशा में बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकती है।

मुझे भी कांची के श्रद्धेय शंकराचार्यजी के बारे में जहां से जो भी सूचना मिली, वह सुखद ही मिली। मैंने यही सुना कि वे अत्यंत उदारवादी हैं, समझदार हैं, दूरदर्शी हैं। उनमें कट्टरता का नामोनिशान नहीं है। भारत की एकता और अखंडता को बनाए रखने के पक्षधर हैं। मैं उनसे यही जानना चाहता हूं कि क्या वे पुराणों की इस भूमिका को जानते-समझते हुए भी अवतार के मुद्दे को पुनः उठाना चाहते हैं अथवा जैसे डॉ. मोदी के साथियों ने मुझे रंगून रहते हुए आश्वासन दिया था कि जो शंकराचार्यजी बर्मा के रास्ते पैदल चलते हुए थाईलैंड जायेंगे, वे बर्मा के एक या दो दिवस के सम्मेलन में पुरानी बातों का भुला देने का आग्रह करेंगे और जो कुछ भूतकाल में हुआ, उसके लिए प्रायश्चित प्रकट करेंगे। मुझे भारत की वस्तुस्थिति को देखते हुए इस आश्वासन पर जरा भी विश्वास नहीं हो रहा था, परंतु उन दोनों बंधुओं ने म्यंमा (बर्मा) के धर्म मंत्रालय के भूतपूर्व उपमंत्री और वर्तमान के बुद्धानुयायी संघ के सभापति मेजर चिं व्यूं के सामने इस आश्वासन को दृढ़तापूर्वक दोहराया। लेकिन अंततः ऐसा कुछ हो नहीं पाया। मुझे फिर इस बात का विश्वास नहीं होता कि बहुत उदार होते हुए भी कांची के श्रद्धेय शंकराचार्यजी इस दिशा में कोई सक्रिय कदम उठा पायेंगे, जिससे कि पड़ोसी देशों के बुद्धभक्त लोगों के तप्त हृदय पर शीतल मैत्री की वर्षा होगी और वे सचमुच तहेदिल से भारत के साथ हो जायेंगे। यदि ऐसा हुआ तो देश के लिए सचमुच बड़े सौभाग्य की बात होगी।

जन्म के आधार पर मानी जा रही वर्णव्यवस्था अनेकानेक जातियों और उपजातियों में बँट कर देश की एकता के लिए एक बहुत बड़ा खतरा बन गयी है। क्या इसे दूर करने के लिए कोई ठोस कदम उठाया जा सकेगा? मैं श्रद्धेय शंकराचार्यजी से स्वयं मिल कर इन समस्याओं पर उनके विचार जान लेना चाहता हूं। ताकि मैं निर्णय कर सकूं कि ऐसी किसी कार्यशाला में मुझे कभी भाग लेना चाहिए या नहीं, जिसके कि सुपरिणाम आने में मुझे तब तक गहरा संदेह बना रहेगा, जब तक कि मित्रता के लक्ष्य तक पहुँचने के साधन बदले न जायँ। यदि इन्हें बदलना कठिन हो तो मैं अपने आप को ऐसी किसी कार्यशाला से दूर रखना ही उचित समझता हूं। किसी विवाद में पड़ना मेरे लिए न श्रेयस है, न प्रेयस और न ही मेरे स्वभाव के अनुकूल है। मैं अपनी सामर्थ्य-शक्ति के अनुसार जो काम कर रहा हूं और जिससे मुझे विश्वास है कि भारत की अखंडता को बहुत बड़ा बल मिलेगा, उसकी गौरव-गरिमा सारे विश्व में पुनर्स्थापित होगी और जिससे भारत तथा विश्व के सभी संप्रदायों के अनेक लोगों का प्रभूत कल्याण होगा, उसी क्षेत्र में मैं अपनी सारी ऊर्जा और शक्ति लगाए रखूं, यही उचित है। उपरोक्त समस्या के समाधान के लिए मैं श्रद्धेय शंकराचार्यजी से स्वयं मिल कर विचार-विमर्श किया चाहता हूं। परंतु मैं यह भी बिल्कुल नहीं चाहता कि हमारी यह पारस्परिक ऐतिहासिक वार्ता सुफलदायी न हों। इसीलिए मिलने के पहले उनके विचारों से अवगत हुआ चाहता हूं।

मेरी सदा यही हार्दिक कामना रही है कि विश्व की सभी धार्मिक परंपराएं एक-दूसरे के प्रति स्नेहभाव रखें। पारस्परिक मतभेद के किसी भी मुद्दे को महत्त्व न देकर शील, सदाचार, संयम, चित्त की निर्मलता और तज्जन्य मैत्री, करुणा तथा सद्भावना को ही महत्त्व दें, जो कि सर्वस्वीकृत सार्वजनीन धर्म है। भगवान बुद्ध की श्रमण परंपरा और वैदिक परंपरा भी इसी मूल आधार को महत्त्व देकर पारस्परिक सहयोग बढ़ाएं। ऐसा होगा तो लुंबिनी में होने वाली कार्यशाला अवश्य सफल होगी। पवित्र हिमालय के आंगन में बोधिसत्व शाक्य कुमार सिद्धार्थ गौतम को जन्म देने वाली पावन नेपाल भूमि गौरवान्वित होगी तथा शाक्यमुनि को जहां सम्यक संबोधि प्राप्त हुई वह पावन भारत भूमि भी। सदियों से स्नेहसूत्र में बँधे हुए इन पड़ोसी देशों के साथ-साथ सारे विश्व का कल्याण होगा।

कुछ पौराणिक उद्धरण :-

विष्णु के अवतार बुद्ध

अवतारवाद की मान्यता का प्रचलन भले कुछ पहले हुआ हो, परंतु बुद्ध को विष्णु का अवतार स्थापित करने की कथा का उद्गम विष्णु पुराण से ही हुआ लगता है। कथा की संरचना इस प्रकार की गयी-

देवताओं और दैत्यों के लंबे संग्राम में देवता पराजित हुए। तब देवता भगवान विष्णु के पास गये। अपनी कठिनाई उनके सामने प्रकट करने के पहले उनके गुणों की प्रशंसा करते हुए उनकी स्तुति की। इस उपक्रम में उन्होंने विष्णु के दुर्गुणों का भी वर्णन करते हुए उनकी स्तुति की। उदाहरण स्वरूप उन्होंने कहा,

- जो क्षमाहीनता का आधार है, अत्यंत क्रूर है और भोगलिप्त है, आप के उस दो जीभ वाले नाग के स्वरूप को हम नमस्कार करते हैं।

और यह भी कहा,

- हम आपके तमोगुणी पशुरूप को प्रणाम करते हैं।

और यह भी कहा,

दंभप्रायम् असंबोधि, तितिक्षा दमवर्जितम्।

यद् रूपे तव गोविन्द, तस्मै दैत्यात्मने नमः॥

- हे गोविंद, आपका जो दंभी स्वरूप है, संबोधिविहीन स्वरूप है, सहिष्णुताविहीन, संयमविहीन दैत्य स्वरूप है उसे हम प्रणाम करते हैं।

और फिर

क्रौर्मं मायामयं घोरं, यच्चरूपं तवासितम्।

निशाचरात्मने तस्मै, नमस्ते पुरुषोत्तम॥

- हे पुरुषोत्तम! आपका जो क्रूरतापूर्ण, भयंकर मायामय और तमोमय रूप है, उसे हम नमस्कार करते हैं।

इस स्तुति से प्रसन्न होकर जब भगवान विष्णु प्रकट हुए तो देवताओं ने उनके सामने अपनी कठिनाई रखी-

स्ववर्ण धर्माभिरता, वेदमार्गानुसारिणः।

नशक्यास्तेरयो, हंतुमस्माभिस्तपसावृताः॥

- ये जो हमारे (दानव) शत्रु हैं, वे वेदमार्ग का अनुसरण करने वाले हैं, वर्ण धर्म का पालन करने वाले हैं, तपोनिष्ट हैं इस कारण हम इनका वध कर सकने में असमर्थ हैं।

इत्युक्तो भगवांस्तेभ्यो, मायामोह शरीरतः।

समुत्पाय ददौ विष्णु, प्राह चेदं सुरोत्तमान्॥

- उनकी प्रार्थना सुन कर भगवान विष्णु ने अपने देह से मायामोह की उत्पत्ति कर उसे देवताओं को देते हुए कहा,

मायामोहोखिलान्दैत्यास्तान्वोहयिस्यति।

ततो वध्याभविष्यन्ति, वेदमार्गबहिष्कृता॥

- यह मायामोह सभी दैत्यों को मोहित कर देगा, तब वे वेदमार्ग को त्याग देंगे, जिससे तुम उनका वध करने में समर्थ हो जाओगे।

तद्गच्छत न भीः कार्या, मायामोहोयमग्रतः।

गच्छन्तद्योपकाराय, भवतां भविता सुराः॥

- इसलिए हे देवताओ! अब तुम जाओ! भय का त्याग करो। यह मायामोह वहां जाकर तुम्हारे लिए उपकारी होगा।

और फिर मायामोह ने अपना काम करना शुरू किया।

नानाप्रकार वचनं स, तेषां युक्तियोजितं।

या तथा त्रयीधर्म, तस्य जुस्ते यथायथा॥

- नाना प्रकार के युक्तिपूर्ण वचनों में फँसा कर मायामोह ने असुरों का त्रयी (वैदिक) धर्म छुड़वा दिया।

मायामोहेन ते दैत्या, प्रकारैर्बहुभिस्तथा।
व्युत्थापिता यथानैषा, त्रयी कश्चिद्रोचयत्॥

– अनेक युक्तियों से मायामोह ने दैत्यों को स्वधर्म से विचलित कर दिया, जिससे त्रयीधर्म में उनकी किंचित भी रुचि नहीं रही।

इस पौराणिक कथा का अंत जिस एक और कथा से जोड़ा गया है वह तो देश के लिए और भी दुर्भाग्यपूर्ण साबित हुई है। इस कथा के अनुसार जो-जो इस प्रकार मायामोह के फेर में पड़ कर वेदमार्ग से च्युत हो गये, उनसे बातचीत करने से, उनके साथ भोजन करने से, उनके साथ उठने-बैठने से, उन्हें स्पर्श करने से और यहां तक कि उन्हें देखने से व्यक्ति घोर पाप का भागी होता है और उसे अनेक जन्मों तक अधोगति में से गुजरना पड़ता है। इससे देश में जिस अछूत प्रथा का आरंभ हुआ वह कितनी घातक सिद्ध हुई यह नितांत स्पष्ट है।

*****

भगवान विष्णु के मन के मैल स्वरूप मायामोह के बुद्धावतार की यह कथा अन्य पुराणों में भी दुहराई जाती रही, ताकि जनता पर बुद्ध और उनकी शिक्षा के प्रति हीनभाव पुष्ट होता जाय।

*****

अग्निमहापुराणम्

वक्षे बुद्धावतारं च, पठतः शृण्वतोर्थदम्।
पुरा देवासुरा युद्धे, दैत्यैर्देवाः पराजिताः॥

– अब मैं बुद्धावतार का वर्णन करूंगा, जो पढ़ने और सुनने वाले का मनोरथ सिद्ध करने वाला है। पूर्वकाल में सुरों और असुरों में युद्ध हुआ, जिसमें दैत्यों ने देवताओं को पराजित किया।

मायामोहस्वरूपोसौ, शुद्धोदनसुतोभवत्॥
– भगवान मायामोह रूप में आकर शुद्धोदन के पुत्र हुए।

मत्स्यमहापुराणम्

कर्तुं धर्मव्यवस्थानमसुराणां प्रणाशनम्।
बुद्धो नवमको जज्ञे तपसा पुष्करेक्षणः।
देवसुन्दररूपेण द्वैपायनपुरःसरः॥२४७॥

– धर्म का व्यवस्थापन तथा असुरों के संहार के लिए नवां अवतार कमलनयन, देवसुंदर बुद्ध का जन्म हुआ।

*****

पद्ममहापुराणम्

समुत्पाद्यददौतस्यप्राहचेदंबृहस्पतिम्।
मायामोहोयमखिलांस्तान्दैत्यान्मोहयिष्यति॥

– बृहस्पति ने यह कहा है कि मायामोह सारे दैत्यों को मोहित कर लेंगे।

भवतासहितःसर्वान्वेदमार्गबहिष्कृतान्।
– सब दैत्य वेदमार्ग से बहिष्कृत हो जायेंगे।

*****

श्रीमद्भागवतमहापुराणम् (गीताप्रेस, गोरखपुर)

प्रथमखण्ड, प्रथमस्कंधे, अध्याय- ३, पृ. ५६

ततः कलौ सम्प्रवृत्ते सम्मोहाय सुरद्विषाम्।
बुद्धो नाम्नाजनसुतः कीकटेषु भविष्यति॥२४॥

– उसके बाद कलियुग आ जाने पर मगधदेश (बिहार) में देवताओं के द्वेषी दैत्यों को मोहित करने के लिए अजन के पुत्ररूप में आपका बुद्धावतार होगा।

द्वितीयखण्ड, दशमस्कंधे, अध्याय - ४०, पृ. ३७६

नमो बुद्धाय शुद्धाय दैत्यदानवमोहिने।

– दैत्य और दानवों को मोहित करने के लिए आप शुद्ध अहिंसा मार्ग के प्रवर्तक बुद्ध का रूप ग्रहण करेंगे। मैं आप को नमस्कार करता हूं।

*****

बुद्ध को अवतार बताने वाले पुराणों के कुछ अन्य उद्धरण –

भविष्य पुराण में बुद्ध को असुर (राक्षस) कहा गया है :–

बलिना प्रेषितो भूमौ, मयः प्राप्तो महासुरः।
शाक्यसिंह गुरुर्गेयो, बहुमाया प्रवर्तकः॥३०॥

स नाम्ना गौतमाचार्या, दैत्य पक्ष विवर्धकः।
सर्व तीर्थेषु तेनेव, यंत्राणि स्थापितानि वै॥३१॥

तेषामधोगता येतु, बौद्धाश्चासंसमन्ततः।
शिखा सूत्र विहीनाश्च, बभूवूर्वर्णसंकरा॥३२॥

दश कोट्य स्मृता आर्या, बूभबुर्बौद्ध मार्गिणः॥३३॥

– (भविष्यपुराण, प्रतिसर्ग पर्व ४, अं. २०)

– बलि ने पृथ्वी पर एक माया प्रवर्तक महान असुर को भेजा जो शाक्यसिंह के नाम से विख्यात हुआ, उसे गौतम आचार्य भी कहते थे। वह दैत्यों के पक्ष को बढ़ाने वाला था। उसने सभी तीर्थों में अपनी संस्था स्थापित की। जो लोग उसके मतानुयायी बौद्ध बने वे चोटी व जनेऊ से हीन एवं नीच गति को प्राप्त होकर वर्णसंकर हो गये। दस करोड़ आर्य बौद्ध मार्ग के अनुगामी हो गए।

*****

बालमीकि रामायण में कहा गया है –

यथा हि चोरः स तथा हि बुद्धस्तथागतं नास्तिकमत्र विद्धि।
तस्माद्धि यः शक्यतमः प्रजानां स नास्तिके नाभिमुखा बुधः स्यात॥

(वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस गोरखपुर, अयोध्याकांड, सर्ग १०९, श्लोक ३४)

– 'जैसे चोर (डाकू) दंडनीय होता है, उसी प्रकार (वेदविरोधी) बुद्ध (बौद्धमतावलंबी) भी दंडनीय है। तथागत (नास्तिक विशेष) और (चार्वाक सदृश) अन्य नास्तिकों को भी यहां इसी कोटि में समझना चाहिए। इसलिए प्रजा पर अनुग्रह करने के लिए राजा द्वारा जिस नास्तिक को दंड दिया जा सके, उसे तो चोर के समान दंड दिलाया ही जाय, परंतु जो वश के बाहर हो, उस नास्तिक के प्रति विद्वान ब्राह्मण कभी उन्मुख न हो, उससे वार्तालाप न करे।'

*****

कल्किपुराणम् के कुछ उद्धरण –

द्वितीयांश, षष्ठोअध्यायः –

विष्णु के अवतार कल्कि ने जिस नगर पर आक्रमण किया, उस कीकटपुर के बारे में कहा है –

बुद्धालयं सुविपुलं वेदधर्म्मबहिष्कृतम्। ..॥४१॥

– यह अत्यंत विस्तृत नगर है बौद्धों का प्रधान आलय है। इस देश में वैदिक धर्म का बहिष्कार है।

श्रुत्वा जिनो निजगणैः कल्केरागमनं क्रुधा।
अक्षौहिणीभ्यां सहितः संबभूव पुराद्बिहिः॥४४॥

– जिन (बुद्ध का एक नाम) ने जब सुना कि कल्कि अपने गण के साथ युद्ध करने आया है, तब वह दो अक्षौहिणी सेना सहित नगर से बाहर निकला।

द्वितीयांश, सप्तमोअध्यायः –

युद्धभूमि में कल्कि बौद्धों को ललकारता है –

रे बौद्धा! मा पलायध्वं निवर्त्तध्वं रणाङ्गणे। ..॥३॥

– रे बौद्धगण! तुम लोग रणभूमि से भागो मत, लौटो, युद्ध करो।

इस घोर युद्ध में जिन मारा गया। तब,

जिनं निपतितं दृष्ट्वा बौद्धा हाहेति चुक्रुशुः।

कल्केः सेनागणा विप्रा जहृषुर्निहतारयः॥२७॥

– जिन को धराशायी हुआ देख बौद्धों की सेना हाहाकार करने लगी। हे ब्राह्मणो! शत्रु के मारे जाने से कल्किजी की सेना के हर्षकी सीमा न रही।

तत्पश्चात,

स तु शुद्धोदनस्तेन युयुधे भीमविक्रमः। ..॥३१॥

– भीमविक्रम शुद्धोदन ने भी उसके साथ युद्ध करना आरंभ किया।...

उसका साथ देने के लिए महामाया भी आयी।

महामाया तो विष्णु की अपनी ही महामाया थी। अतः उसे तो आत्मसात कर लिया और शुद्धोदन का संहार कर दिया। इन दोनों के भी नष्ट हो जाने पर,

निरीक्ष्य कल्किं ते बौद्धास्त्रसुर्धर्म्मनिन्दका॥५०॥

– .. धर्म की निंदा करने वाले बौद्धलोग भय से व्याकुल हो गये।

तृतीयांशः, प्रथमोअध्यायः –

दत्त्वा मोक्षं म्लेच्छबौद्धप्रियांणां कृत्वा युद्धं भैरवं भीमकर्म्मा।

हत्वा बौद्धान् म्लेच्छसंघांश्च कल्किस्तेषां ज्योतिः स्थानमापूर्य्य रेजे॥४३॥

– इस प्रकार से भयंकर कर्म करने वाले कल्किजी ने भयंकर युद्ध करके बौद्धों के और म्लेच्छों के संघ का नाश किया। फिर वह उनकी स्त्रियों को मुक्तिपद दे इन मृत म्लेच्छ और बौद्धों को ज्योतिर्मय स्थान में भेज कर शोभायमान होने लगे।

ये शृण्वन्ति वदन्ती बौद्धनिधनं म्लेच्छक्षयं,

सादराल्लोकाः शोकहरं सदा शुभकरं भक्तिप्रदं माधवे।

तेषामेव पुनर्न जन्ममरणं सर्व्वार्थसम्पत्करं।

मायामोहविनाशनं प्रतिदिनं संसारतापच्छिदम्॥४४॥

– म्लेच्छों के इस क्षय और बौद्धों के नाश को जो लोग आदरपूर्वक कहेंगे या सुनेंगे, उनके समस्त शोक दूर होंगे। वे सदा कल्याणभाजन होंगे। माधव के प्रति उनको भक्ति उत्पन्न होगी। इससे फिर उनका न जन्म होगा, न मृत्यु होगी। इस वृत्तांत के श्रवण करने से समस्त संपत्तियां प्राप्त होती हैं, मायामोह दूर हो जाता है और फिर संसार के ताप नहीं सहने पड़ते।

तृतीयांशः एकविंशोअध्यायः –

ये भक्त्यात्र पुराणसारममलं श्रीविष्णुभावाप्लुतं,

शृण्वन्तीह वदन्ति साधुसदसि क्षेत्रे सुतीर्थाश्रमे।

दत्त्वागां तुरगं गजं गजवरं स्वर्णं द्विजायादरात्।

वस्त्रालङ्कारणैः प्रपूज्य विधिवन्मुक्तास्तु एवोत्तमाः॥३१॥

– जो लोग साधु समाज में, पुण्यक्षेत्र में, पुण्य तीर्थ में और महर्षि आदि के आश्रम में वस्त्राभूषण आदि से ब्राह्मणों की पूजा कर आदर सहित गो, अश्व, हाथी, सुवर्ण आदि (उनको) देकर भक्ति के साथ विष्णुभावपूर्ण, **सब पुराणों का सार** इस शुद्ध कल्कि पुराण का कीर्तन अथवा श्रवण करेंगे उन श्रेष्ठ लोगों की मुक्ति निश्चित है, इसमें संदेह नहीं।

*****

ऐसी फलश्रुतियों के कारण ही इन मनगढ़न्त पौराणिक कथाओं का देश में प्रबल प्रचार हुआ होगा और बुद्ध तथा उनकी शिक्षा का घोर अवमूल्यन हुआ होगा।

जगद्गुरु श्रद्धेय शंकराचार्य श्री जयेन्द्र सरस्वतीजी और विपश्यनाचार्य गुरुजी श्री सत्यनारायण गोयन्काजी की संयुक्त प्रेस विज्ञप्ति

स्थलः महाबोधि कार्यालय, सारनाथ (वाराणसी) (उत्तर प्रदेश)

समयः दोपहरः ३:३०, **दिनांक १२-११-१९९९.**

जगद्गुरु कांची कामकोटि पीठ के श्रद्धेय शंकराचार्य श्री जयेन्द्र सरस्वतीजी और विपश्यनाचार्य गुरुजी श्री सत्यनारायण गोयन्काजी की सौहार्दपूर्ण वार्तालाप की संयुक्त विज्ञप्ति प्रकाशित की जा रही है। दोनों इस बात से सहमत हैं और चाहते हैं कि दोनों प्राचीन परंपराओं में अत्यंत स्नेहपूर्वक वातावरण स्थापित रहे। इसे लेकर जिन पड़ोसी देशों के बन्धुओं में किसी कारण किसी प्रकार की गलतफहमी पैदा हुई हो, उसका शीघ्रातिशीघ्र निराकरण हो। इस संबंध में निम्न बातों पर सहमति हुई :-

१) किसी भी कारण से पूर्वकाल में पारस्परिक मतभेदों को लेकर जो भी साहित्य निर्माण हुआ, जिसमें भगवान बुद्ध को विष्णु का अवतार बता कर जो कुछ लिखा गया, वह पड़ोसी देश के बंधुओं को अप्रिय लगा, इसे हम समझते हैं। इसलिए दोनों समुदायों के पारस्परिक संबंधों को पुनः स्नेहपूर्वक बनाने के लिए हम निर्णय करते हैं कि भूतकाल में जो हुआ, उसे भुला कर अब हमें इस प्रकार की किसी मान्यता को बढ़ावा नहीं देना चाहिए।

२) पड़ोसी देशों में यह भ्रांति फैली कि भारत का हिंदू समुदाय बुद्धानुयायिओं पर अपना वर्चस्व स्थापित करने के लिए इन कार्यशालाओं का आयोजन कर रहा है। यह बात उनके मन से सदा के लिए निकल जाय, इसलिए हम यह प्रज्ञापित करते हैं वैदिक और बुद्ध-श्रमण की परंपरा भारत की अत्यंत प्राचीन मान्य परंपराओं में से हैं। दोनों का अपना-अपना गौरवपूर्ण स्वतंत्र अस्तित्व है। किसी एक परंपरा द्वारा अपने आपको ऊंचा और दूसरे को नीचा दिखाने का काम परस्पर द्वेष, वैमनस्य बढ़ाने का ही कारण बनता है। इसलिए भविष्य में कभी ऐसा न हो। दोनों परंपराओं को समान आदर एवं गौरव का भाव दिया जाय।

३) सत्कर्म के द्वारा कोई भी व्यक्ति समाज में ऊंचा स्थान प्राप्त कर सकता है और दुष्कर्म के द्वारा पतित होता है। इसलिए हर व्यक्ति सत्कर्म करके तथा काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ, मात्सर्य, अहंकार इत्यादि अशुभ दुर्गुणों को निकाल कर अपने आप को समाज में उच्च स्थान पर स्थापित करके सुख-शांति का अनुभव कर सकता है।

उपयुक्त तीनों बातों पर हम दोनों की पूर्ण सहमति है तथा हम चाहते हैं कि भारत के सभी समुदाय के लोग पारस्परिक मैत्री भाव रखें तथा पड़ोसी देश भी भारत के साथ पूर्ण मैत्री भाव रखें।



Vipassana International Academy

Dhamma Giri, Igatpuri, India 422403. Tel: 91-2553-84076, 84086
Fax: 91-2553-84176.
Email: dhamma@vsnl.com. website: www.vri.dhamma.org

The glory of the holy Himalayas increased many-fold by the birth of the Bodhisatta Siddharth who became a Buddha and showed the path of peace and happiness for the entire world. Blessed is the land of Nepal!
Siddhartha attained perfect enlightenment at Bodh Gaya in India. Blessed is the land of India!
Dr. B. K. Modi started organising conferences with the aim of establishing cordial relations between the two traditions: Shramana and Vedic. But due to some of the transactions of these conferences the followers of the Buddha in the neighbouring countries of India started having doubts that the organisers, by declaring the Buddha to be an incarnation of Vishnu, are trying to deglorify the liberation and the perfect enlightenment of the Buddha and are trying to prove that all of the Buddha's teaching was taken from the Vedic tradition thereby insinuating the supremacy of the Vedic tradition. These doubts were generation enmity rather than amity.
Fortunately, I could discuss this at lenght with His Holiness the Shankaracharya of Kanchi Kamkoti Peeth in a congenial manner. HH Shankaracharya was in complete agreement that we should ignore all such past literature in India, written due to whatever reason, in which the Buddha was declared to be a reincarnation of Vishnu and his teaching denounced. HH Shankaracharya further said that he himself does not agree that the Buddha was a reincarnation of Vishnu, He considers the Buddha to be a great human being. He agreed with me that both Vedic and Shraman traditions are ancient traditions with their own prestigious independent identity. In future care should be taken not to make or dndorse any statement that insinuates supremacy of one tradition over the other.

Both of us agreed that nobody can attain a high position in the society by removing the defilements from one's own mind. One becomes a high person in society by performing good deeds with a pure mind and one becomes a low person in society when one indulges in evil actions with a polluted mind. HH Shankaracharya emphasised that the law of karma and its effect is accepted by both Vedic and Shraman (Buddha's and Mahavir's) traditions.

The cordial atmosphere atmosphere in which the discussion was held and the conclusion reached at the end of it is an historic event that will bring these two traditions closer and bind them in friendly ties.

Dr.B.K. Modi is delighted with the dialogue between HH Shankaracharya and me because now he has a clear direction for his efforts. May his good efforts be fruitful !

Metta (loving kindness), Karuna (compassion), Mudita (sympathetic joy) and Upekkha (equanimity) are sublime qualities. Compassion has a special singificance. True compassion always comes from a pure mind. It is a quality that does not belong to any community or tradition. An individual generates it by removing the defilements from mind. If more and more individuals of a particular society generate compassion, the society earns prestige. Hence this quality should arise in each individual. Each indivicual has to make effort. This quality is not a monopoly of Hindus or Buddhists or Jains or Sikkhs or Parsis or Muslims or Christians. It is everybody's right and responsibility, irrespective of his caste and creed, to be compassionate. Let people use this ancient technique to purify the mind and fill it with this sublime quality; for their own welfare and for the welfare of others.

All the saints of the world including those who do not belong to these two traditions became saintly because they generated compassion from a pure mind. We pay homage to all the compassionate sages of the world from all the traditions.

Let us all hope that from now on a new chapter will start in these conferences that will benefit not only the countries belonging to the Vedic and Shraman traditions but also the humanity in general. I extend my hearty good wishes to the conference that is being held in the sacred land of Lumbini in Nepal.

May Nepal awake to its past glory !

May India awake to its past glory !

May all beings be happy, be peaceful and be liberated !

KALYANMITRA,

sd.

S.N.Goenka

विपश्यना साधना संक्षिप्त परिचय

विपश्यना एक सरल एवं उपयोगी ध्यानविधि हो जसको प्रयोगबाट मनलाई वास्तविक शान्ति प्राप्त हुन्छ । विपश्यनाको अभिप्राय हो, जुन वस्तु जस्तो छ त्यसलाई उस्तै जान्नु । आत्मनिरिक्षणद्वारा मन निर्मल गर्दागर्दै यस्तो अनुभव हुन थाल्दछ । हामी आफ्नै अनुभवले के जान्दछौं भने, हाम्रो मन कहिले विचलित हुन्छ, कहिले हताश त कहिले असन्तुलित । यी कारणले जब हामी व्यथित हुन्छौं तब आफ्नो व्यथा आफूमै मात्र सीमित नराखी अरूलाई पनि बाँड्न थाल्दछौं । निश्चय नै यसलाई सार्थक जीवन भन्न मिल्दैन । हामी सबै यही चाहन्छौं स्वयं सुख शान्तिको जीवन जीऊँ र अरूलाई पनि यस्तो जीवन जीउन दिऊँ, तर यस्तो गर्न सक्दैनौं । अत: प्रश्न उठ्छ कसरी संतुलित जीवन जीउने ?

विपश्यना हामीलाई यस योग्य बनाउँछ कि आफू भित्र शान्ति र सामन्जंस्यता अनुभव गर्न सकूँ । यसले चित्तलाई निर्मल बनाउँछ । चित्तको ब्याकुलता र त्यसको कारणलाई हटाउँदै लग्छ । यसको अभ्यास गरिरहेमा कमश: अगाडि बड्दै आफ्नो मानसलाई विकारबाट मुक्त बनाउनुको साथै नितान्त विमुक्त अवस्थाको साक्षात्कार गर्न सकिन्छ ।

अभ्यास

विपश्यना सिक्नको लागि योग्यता प्राप्त आचार्यको सानिध्यमा दश-दिवसीय आवासीय शिविरमा सामेल हुन आवश्यक छ । शिविरको अवधिमा साधक शिविरस्थलभित्र रहनु पर्दछ; बाहिरी सम्पर्कबाट अलग रहनु पर्दछ । पढाई-लिखाई, पूजा-पाठ तथा अन्य क्रियाकलाप गर्नु हुँदैन । पटक-पटक गरी दिनमा दश घण्टा बसेर ध्यान गर्नु पर्दछ । सह साधकहरूसँग कुराकानी गर्न बिल्कुल हुँदैन । परन्तु आचार्यसँग साधना सम्बन्धी र व्यवस्थापकसँग भौतिक समस्याको बारेमा आवश्यकतानुसार कुराकानी गर्न सकिन्छ ।

प्रशिक्षणका तीन खुड्किलाहरू छन् । पहिलो खुड्किलो-साधक आफ्नो हानि हुने कार्यबाट पर रहनु पर्छ । यसको लागि उसले पाँच शील- जीव हिंसा नगर्ने, चोरी नगर्ने, झुठ नबोल्ने, ब्रम्हचर्य पालन गर्ने तथा नशा-सेवन नगर्ने अठोट गर्नु पर्छ ।